जबलपुर, दिनांक 19 मई 2022

क्र. D–1176,

भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के साथ पठित सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (क्रमांक 5 सन् 1908) की धारा 122 एवं मध्य प्रदेश सिविल न्यायालय अधिनियम, 1958 (क्रमांक 19 सन् 1958) की धारा 23, द्वारा प्रदत्त शक्तियों को प्रयोग 5में लाते हुए, मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय, एतद्द्वारा, सिविल अपील क्रं० 2021 का 1659 – 1660 / विशेष अनुमति याचिका क्रमांक 7965 – 7966 / 2020 में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित निर्देश दिनांक 22.04.2021 के अनुसरण में मध्य प्रदेश सिविल न्यायालय नियम, 1961 में निम्नलिखित संशोधन करता है, अर्थात्:–

# संशोधन

उक्त नियमों में,–

1. नियम 138 के उप–नियम (1) में, प्रारंभ में शब्द, क्रमांक तथा अक्षरों "आदेश 10 नियम 1 प्रावधानों की ओर जो कदाचित ही पालन किए जाते हैं की ओर पीठासीन न्यायाधीशों का ध्यान आकृष्ट किया जाता है।" के स्थान पर, निम्नलिखित शब्द, क्रमांक तथा अक्षर प्रतिस्थापित किये जाएं, अर्थात्:–

"कब्जा देने से संबंधित वादों में, न्यायालय को तीसरे पक्ष के हित के संबंध में आदेश 10 के अंतर्गत वाद के पक्षकारों की परीक्षा करना चाहिए। पीठासीन अधिकारी सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 10 नियम 1 के उपबंधों का पालन करेंगे।"।

2. नियम 143 में,–

(1) उप–नियम (1) के पश्चात् निम्नलिखित उप–नियम जोड़ा जाए, अर्थात्:–

"(1–क) कब्जा देने से संबंधित वादों में, न्यायालय को आदेश 11 नियम 14 के अतंर्गत शक्ति का प्रयोग करना चाहिए, जिसमें पक्षकारों को शपथ पर, ऐसे दस्तावेज प्रकट एवं पेश करने के लिए कहा

जाए, जो पक्षकारों के कब्जे में हों, जिसमें ऐसी संपत्तियों में तीसरे पक्ष के हित से संबंधित घोषणा शामिल है।"।

(2) उप–नियम (2) के पश्चात् निम्नलिखित उप–नियम जोड़ा जाए, अर्थात्:–

"(2–क) आदेश 10 के अंतर्गत पक्षकारों की परीक्षा या आदेश 11 के अंतर्गत दस्तावेज की प्रस्तुति या कमीशन की रिपोर्ट की प्राप्ति के पश्चात्, न्यायालय को वाद के सभी आवश्यक या उचित पक्षकारों को जोड़ना चाहिए जिससे कार्यवाहियों की बहुलता से बचा जा सके एवं ऐसे वाद हेतुकों का संयोजन भी उसी वाद में करना चाहिए।"।

(3) उप–नियम (4) के पश्चात्, निम्नलिखित उप–नियम जोड़ा जाए, अर्थात्:–

"(5) धन के संदाय के लिए वाद में, विवाद्यकों के स्थिरीकरण के पूर्व, प्रतिवादी जहाँ तक उसे वाद में उत्तरदायी बनाया जा रहा है, उस सीमा तक अपनी संपत्ति को शपथ पर प्रकट करने हेतु अपेक्षित किया जा सकेगा। न्यायालय इसके अतिरिक्त, किसी भी प्रक्रम पर, समुचित मामलों में, वाद लंबित रहने के दौरान, सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के अंतर्गत शक्तियों को उपयोग करते हुए, किसी आज्ञप्ति की संतुष्टि सुनिश्चित करने हेतु प्रतिभूति अपेक्षित कर सकती है।"।

3. नियम 168 में, विद्यमान पैराग्राफ उप–नियम (1) के रूप में क्रमांकित किया जाए व इस प्रकार क्रमांकित उप–नियम (1) के पश्चात्, निम्नलिखित उप–नियम जोड़ा जाए, अर्थात्:–

"(2) न्यायालय को, किसी संपत्ति के कब्जे के परिदान के संबंध में आज्ञप्ति पारित करने के पूर्व आवश्यक रूप से यह सुनिश्चित करना चाहिए कि आज्ञप्ति न केवल उस संपंत्ति का स्पष्ट विवरण समाहित करे, बल्कि संपत्ति की स्थिति के संबंध में भी असंदिग्ध हो।"।

4. नियम 184 में, उप–नियम (1) के अंत में, शब्दों "वाद का निराकरण यथासम्भव शीघ्र हो जाए।" के स्थान पर निम्नलिखित प्रतिस्थापित किया जाए, अर्थात्:–
"वे प्रवर्तन प्रकरण प्रस्तुत करने की दिनांक से छः माह के भीतर निराकृत हो जाएं, जिसे केवल लिखित में, ऐसे विलंब के कारणों को अभिलिखित करने पर ही बढ़ाया जा सकेगा।"।

5. नियम 187 में, विद्यमान पैराग्राफ, उप–नियम (1) के रूप में क्रमांकित किया जाए व इस प्रकार क्रमांकित उप–नियम (1) के पश्चात्, निम्न उप–नियम जोड़ा जाए, अर्थात्:–

"(2) धन संबंधी वाद में, न्यायालय अनिवार्यतः निरपवाद रूप से आदेश 21 नियम 11 का प्रयोग कर, मौखिक आवेदन पर धन के भुगतान हेतु आज्ञप्ति के त्वरित निष्पादन को सुनिश्चित करेगा।"।

6. नियम 197 में, विद्यमान पैराग्राफ को उप–नियम (1) के रूप में क्रमांकित किया जाए और इस प्रकार क्रमांकित उप–नियम (1) के बाद निम्न उप–नियम जोड़ा जाए, अर्थात्:–

"(2) सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 60 के अंतर्गत पद " ..... निर्णीत–ऋणी के नाम में या किसी अन्य व्यक्ति द्वारा उसके लिए न्यास में या उसकी ओर से" को किसी अन्य व्यक्ति, जिससे वह हिस्सा, लाभ या संपत्ति प्राप्त करने की योग्यता रखता हो, को सम्मिलित करने हेतु उदारतापूर्वक पढ़ा जाना चाहिए।"।

"(2) न्यायालय को, किसी संपत्ति के कब्जे के परिदान के संबंध में आज्ञप्ति पारित करने के पूर्व आवश्यक रूप से यह सुनिश्चित करना चाहिए कि आज्ञप्ति न केवल उस संपंत्ति का स्पष्ट विवरण समाहित करे, बल्कि संपत्ति की स्थिति के संबंध में भी असंदिग्ध हो।"।

4. नियम 184 में, उप–नियम (1) के अंत में, शब्दों "वाद का निराकरण यथासम्भव शीघ्र हो जाए।" के स्थान पर निम्नलिखित प्रतिस्थापित किया जाए, अर्थात्:–
"वे प्रवर्तन प्रकरण प्रस्तुत करने की दिनांक से छः माह के भीतर निराकृत हो जाएं, जिसे केवल लिखित में, ऐसे विलंब के कारणों को अभिलिखित करने पर ही बढ़ाया जा सकेगा।"।

5. नियम 187 में, विद्यमान पैराग्राफ, उप–नियम (1) के रूप में क्रमांकित किया जाए व इस प्रकार क्रमांकित उप–नियम (1) के पश्चात्, निम्न उप–नियम जोड़ा जाए, अर्थात्:–

"(2) धन संबंधी वाद में, न्यायालय अनिवार्यतः निरपवाद रूप से आदेश 21 नियम 11 का प्रयोग कर, मौखिक आवेदन पर धन के भुगतान हेतु आज्ञप्ति के त्वरित निष्पादन को सुनिश्चित करेगा।"।

6. नियम 197 में, विद्यमान पैराग्राफ को उप–नियम (1) के रूप में क्रमांकित किया जाए और इस प्रकार क्रमांकित उप–नियम (1) के बाद निम्न उप–नियम जोड़ा जाए, अर्थात्:–

"(2) सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 60 के अंतर्गत पद " ..... निर्णीत–ऋणी के नाम में या किसी अन्य व्यक्ति द्वारा उसके लिए न्यास में या उसकी ओर से" को किसी अन्य व्यक्ति, जिससे वह हिस्सा, लाभ या संपत्ति प्राप्त करने की योग्यता रखता हो, को सम्मिलित करने हेतु उदारतापूर्वक पढ़ा जाना चाहिए।"।

7. नियम 204 के बाद, निम्नलिखित नियम जोड़ा जाए, अर्थात्:–

"204–क (1) सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 47 या आदेश 21 के अंतर्गत अधिकारिता का प्रयोग करने वाले न्यायालय को अधिकारों का दावा करने वाले तीसरे पक्ष के आवेदन पर यंत्रवत सूचना जारी नहीं करना चाहिए। अग्रेतर, न्यायालय को ऐसे किसी भी आवेदन (आवेदनों) पर विचार करने से बचना चाहिए जिस पर पहले ही न्यायालय द्वारा वाद के न्यायनिर्णयन के समय विचार किया जा चुका हो या जो ऐसा विवाद्यक उठाता हो जो अन्यथा वाद के न्यायनिर्णयन के दौरान उठाया और न्यायनिर्णीत किया जा सकता था यदि आवेदक द्वारा सम्यक सावधानी बरती गई होती।

(2) न्यायालय का निष्पादन की कार्यवाही के दौरान केवल आपवादिक व दुर्लभ मामलों में ही साक्ष्य लेने की अनुमति देनी चाहिए, जहां तथ्य का प्रश्न किसी अन्य त्वरित तरीके, जैसे कमिश्नर की नियुक्ति या शपथपत्र के साथ फोटो या वीडियो सहित इलेक्ट्रॉनिक सामग्री मंगाने, का सहारा लेकर विनिश्चित नहीं किया जा सकता।

(3) न्यायालय को उपयुक्त मामलों में, जहां वह आपत्ति या प्रतिरोध या दावा तुच्छ या दुर्भावनापूर्ण लगता है, आदेश 21 के नियम 98 के उप–नियम (2) का सहारा लेना चाहिए और साथ ही साथ धारा 35–क के अनुसार प्रतिकारात्मक खर्चे अनुदत्त करने चाहिए।"।

8. नियम 232 में,–

(1) उप–नियम (1) के स्थान पर निम्नलिखित उप–नियम स्थापित किया जाए, अर्थात्:–

"(1) निष्पादन न्यायालय इस तथ्य से संतुष्ट होने पर कि पुलिस की सहायता के बिना डिक्री का निष्पादन संभव नहीं है, जिला

पुलिस अधीक्षक / संबंधित थाने के भारसाधक अधिकारी को ऐसे कर्मचारियों को पुलिस सहायता उपलब्ध कराने हेतु निर्देश दे सकता है जो डिक्री के निष्पादन की दिशा में कार्य कर रहे हैं।"।

(2) उप–नियम (2) में, "जिला पुलिस अधीक्षक" शब्दों के बाद चिन्ह व शब्द "/ संबंधित थाने के भारसाधक अधिकारी" अंतर्विष्ट किए जाएं, जहाँ कहीं भी वे आते हैं।

(3) उप–नियम (2) के पश्चात्, निम्नलिखित उप–नियम जोड़ा जाए, अर्थात्:–

"(3) यदि लोक सेवक के विरूद्ध उसके कर्त्तव्यों के निर्वहन के दौरान किसी अपराध को न्यायालय के ज्ञान में लाया जाता है, तो उससे विधि के अनुसार कड़ाई से निपटा जाना चाहिए।"।

9. नियम 243 के उप–नियम (1) में, अंत में, "सिविल प्रक्रिया संहिता" शब्दों के पश्चात्, निम्नलिखित जोड़ा जाए, अर्थात्:–

"तथा उपयुक्त मामले, जहाँ कब्ज़ा विवादित नहीं है और न ही न्यायालय के समक्ष न्यायनिर्णयन हेतु वह तथ्य का प्रश्न है, तब संपत्ति के सटीक विवरण तथा स्थिति का आकलन करने के लिए कमीशन जारी किया जा सकता है।"

10. नियम 276 में, अंत में, निम्नलिखित जोड़ा जाए, अर्थात्:–

"मामले के यथोचित न्यायनिर्णयन हेतु एक न्यायालय प्रापक को प्रश्नगत संपत्ति की स्थिति की निगरानी करने के लिए विधिक अभिरक्षक के रूप में नियुक्त किया जा सकता है।"

माननीय उच्च न्यायालय के आदेशानुसार,
**कृष्णमूर्ति मिश्रा**, रजिस्ट्रार जनरल.